NOT TO BE REMOVED

मोठ उत्पादन एवं उपयोग प्रौद्योगिकी

135

भाकृअनुप
ICAR

अखिल भारतीय समन्वित रूक्ष दलहन परियोजना

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)

केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर-342 003 (राज0)

मोठ उत्पादन एवं उपयोग प्रौधोगिकी

संकलन एवं संपादन

डी. कुमार

अखिल भारतीय समन्वित रूक्ष दलहन परियोजना

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)

केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर-342 003 (राज0)

मोठ उत्पादन एवं उपयोग प्रौधोगिकी

छपाई : दिसम्बर, 2003

प्रकाशक : डॉ प्रताप नारायण, निदेशक
केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान,
जोधपुर
फोनः 0291-2740584 फेक्सः 0291-2740706

सहयोग : मंजू सिंह
आरती शेखावत
हंस राज महला

अखिल भारतीय समन्वित रूक्ष दलहन परियोजना
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर-342 003 (राज0)

विषय सूची

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	आमुख	I
2.	प्रस्तावना	II
3.	आभार	III
4.	परिचय	1
5.	क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता	3
6.	उन्नत किस्में	7
7.	शस्य विज्ञान	12
8.	रोग एवं उनका प्रबंधन	17
9.	परजीवी–कीट प्रबंधन	22
10.	उपयोग एवं गुणवत्ता	25

आमुख

मोठ की फसल, विषम वातावरण एवं अल्प जल उपलब्धता वाली परिस्थितयों के प्रति अनुकूलता के लिए जानी जाती है। यही कारण है कि यह फसल मुख्य रूप से राजस्थान के पश्चिमी भागों में उगाई जाती है, जो देश के कुल मोठ उत्पादन क्षेत्र का 86 प्रतिशत भाग है तथा यह क्षेत्र सफल मोठ उत्पादन में 82 प्रतिशत योगदान करता है। मोठ के पौधों की चौड़ी व फैलावदार पत्तियाँ, भूमि की नमी को संग्रहित करके तापमान को कम करने में सहायक होती हैं। वनस्पति प्रोटिन का सस्ता स्रोत होने के कारण इसकी हरी पत्तियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में खाने के काम में आती हैं। इस फसल के लिए सिंचाई तथा अन्य शस्य क्रियाओं की आवश्यकता बहुत ही कम होती है। अतः अत्यधिक सूखे की अवस्था में तथा ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अधिकतर अकाल की स्थिति बन जाती है, केवल मोठ की फसल ही दाना और चारे का एकमात्र स्रोत होती है। रेतीले इलाकों, समतल मैदानों तथा कम उपजाऊ क्षेत्रों के किसानों के बीच मोठ की फसल बहुत ही लोकप्रिय है। यद्यपि मोठ की उत्पादकता अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा सबसे कम (254 कि.ग्रा./हैक्टेयर) है, मोठ की उन्नतशील उत्पादन तकनीकी के प्रचार एवं प्रसार से इसके उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

यद्यपि मोठ के उत्पादन से संबंधित तकनीकी ज्ञान पर्याप्त मात्रा में विकसित किया जा चुका है, फिर भी इसका प्रसार प्रायोगिक क्षेत्रों से ग्रामीण क्षेत्रों तक आवश्यक स्तर पर नहीं हो पाया है। अतः इसके उत्पादन से संबंधित तकनीकी जानकारी को एक संक्षिप्त, सुविधाजनक एवं सरल भाषा में प्रकाशित करने की आवश्यकता है।

मुझे अत्यन्त हर्ष है कि डॉ. देवेन्द्र कुमार ने **''मोठ उत्पादन एवं उपयोग प्रौद्योगिकी''** का संकलन किया है, जिसमें मोठ उत्पादन से संबंधित सभी वांछित तकनीकी एवं जानकारी का समावेश किया गया है। इस पुस्तिका का प्रकाशन अति महत्वपूर्ण, सामयिक एवं प्रशंसनीय् प्रयास है। इसके लिए मैं डॉ. कुमार को बधाई देता हूँ।

मुझे आशा है कि यह पुस्तिका वैज्ञानिकों, योजनाकारों एवं प्रसार कार्यकर्ताओं तथा उन सभी के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी जो मोठ उत्पादन से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं।

(मसऊद अली)
निदेशक
भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान
कानपुर – 208024

प्रस्तावना

मोठ की फसल का अधिकतम क्षेत्रफल शुष्क क्षेत्रों में ही निहित है, यही कारण है कि यह फसल यहाँ रहने वाले किसानों की जीविकोपार्जन का प्रमुख स्त्रोत बन चुकी है। शुष्क क्षेत्रों में सामान्यतः अनउपजाऊ भूमि, पानी एवं वर्षा की कमी, तेज गर्मी जैसी परिस्थितियाँ होती है। इसके बावजूद मोठ की फसल इन विषम परिस्थितियों के प्रति अनुकूलता के लिये जानी जाती है। शुष्क क्षेत्रों की भूमि कम उपजाऊ होती है और साथ ही इसमें आवश्यक पोषक तत्वों की कमी भी होती है। ऐसे स्थानों की भूमि अधिकतर ऊँचे–नीचे टीलों वाली होती है, तथा भूमि में उपयुक्त मात्रा में जल संरक्षण की क्षमता भी कम होती है। इन सभी अनियमित एवं अनियंत्रित परिस्थितियों के प्रति अनुकूल होने के कारण इन क्षेत्रों में केवल मोठ की फसल को ही उगाया जा सकता है। अतः मोठ की फसल का न केवल तकनीकी रूप से सुधार किया जाना जरूरी है, बल्कि परम्परागत ग्रामीण एवं नए–नए क्षेत्रों में भी इसका विस्तार किया जाना बेहद आवश्यक है, ताकि इसके बीजों की गुणवत्ता को बढ़ाने के साथ–साथ इसकी उत्पादकता में भी (कि.ग्रा./हैक्टेयर) वृद्धि की जा सके।

मोठ के तकनीकी विकास में सबसे पहला कदम इसके बीजों की शुद्धता एवं गुणवत्ता को बढ़ाना, विभिन्न कीट और रोगों से फसल को बचाया जाना तथा मानव उपयोग में आने वाले पदार्थों में सुधार किया जाना है। तकनीकी सुधार के लिए बहुत अधिक व्यय एवं सुचारू रूप से बुद्धिजीवियों द्वारा होने वाले श्रम की आवश्यकता होती है। साथ ही इसमें निश्चित कार्यक्षेत्र एवं आवश्यकता विशेष का भी पूरा ध्यान रखना पड़ता है। मोठ की फसल के साथ एक बहुत बड़ी समस्या यह है कि इसको उगाने वाले किसान अधिकतर ग्रामीण एवं कम पढ़े–लिखे हैं और तकनीकी सुधार से सम्बन्धित साधन जुटा पाना उनकी पहुँच से बाहर हैं। इन सभी समस्याओं के मद्देनजर इन तकनीकों को अपनाने और जनसामान्य में लोकप्रिय बनाने के बीच में एक सेतु बनाने की आवश्यकता है।

इन महत्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए ही मोठ की फसल की उत्पादन प्रौद्योगिकी (फसलोत्पादन प्रौधोगिकी) में किये गये संशोधित उपायों को वर्तमान पुस्तिका में दर्शाया गया है। इस पुस्तिका में छोटे से लेकर बड़े पैमाने तक तकनीकी सुधार के सभी अवयवों को बहुत ही साधारण, सुविधाजनक व संक्षिप्त रूप में लिखा गया है।

आशा की जाती है कि वर्तमान पुस्तिका, मोठ की फसल के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में वृद्धि कर पाने में सहायक होगी, साथ ही इस फसल का प्रसार देश के नए तथा अपरम्परागत शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में किया जा सकेगा।

(डी. कुमार)

आभार

मैं डा. एम. राय, सचिव, कृषि अनुसंधान व शिक्षा विभाग, भारत सरकार तथा महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। आपके सतत् प्रोत्साहन एवं दिशा निर्देशन से ही इस प्रकाशन को इसके वर्तमान प्रारूप में लाने में बहुत सहायता मिली है। डा. राय द्वारा दिए गए अंतहीन, सकारात्मक व उत्साहवर्धन प्रयासों का आभार प्रकट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

डा. जी कल्लू उप महानिदेशक (फसल विज्ञान), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली को उनके द्वारा दिये गये अमूल्य योगदान व प्रेरणा के प्रति अत्यन्त आभार प्रकट करना मैं आवश्यक समझता हूँ।

वर्तमान बुलेटिन के प्रकाशन में प्रशासनिक सहयोग के लिए डा. प्रताप नारायण, निदेशक, केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर का, मैं आभार व्यक्त करता हूँ। आपने इस कार्य में अपने अमूल्य समय का योगदान दिया है।

मैं, डा. एन.बी. सिंह, सहायक महानिदेशक (तिलहन एवं दलहन), नई दिल्ली का भी आभार व्यक्त करना चाहूँगा, जिनकी प्रेरणा पाकर मैंने इस बुलेटिन को इसके सजग एवं साकार रूप में लाने का प्रयत्न किया है।

उन सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी सहायकों तथा दूसरे उन सभी सदस्यों को जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी न किसी प्रकार से मोठ पर किए जा रहे अनुसंधानों से जुड़े रहे हैं, का भी आभारी हूँ, जिनके सहयोग से इस पुस्तिका को प्रकाशित करने में सहायता मिली है। यह बुलेटिन उन्हीं के लम्बे और सतत् प्रयासों का संग्रहित रूप है।

उन सभी साथियों एवं अनुसंधानकर्ताओं, जैसे श्री पी.एस. भाटी, डा. नीतू राठौड, डा. सीमा गौड़, करणसिंह गहलोत, श्री सुरेन्द्र सिंह एवं श्री उम्मेद सिंह शामिल है, का भी आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने आवश्यकता के क्षणों में अपनी सहायता देकर इस बुलेटिन को सफलतापूर्वक प्रकाशित कराने में सहायता प्रदान की है।

अंत में, मैं श्री विशन लाल, वरिष्ठ लिपिक, केन्द्रीय भंडार, काजरी, को भी धन्यवाद प्रस्तुत करना चाहता हूँ, जिन्होंने इस बुलेटिन के प्रकाशन में प्रशासनिक सहयोग दिया।

(डी. कुमार)

परिचय

भारत के विभिन्न प्रदेशों की भाषा के आधार पर मोठ को कई नामों से जाना जाता है। जिनमें से कुछ माथ, खेरी, मदीकी, भीओनी, कुनकुमा एवं मटकी इत्यादि हैं। इतनी सारी भाषाओं में इसके प्रचलित नामों से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि इस फसल को जनसामान्य के एक बहुत बड़े समूह द्वारा अपनाया और सराहा गया है। शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में मोठ की फसल को एक प्रमुख फसल के रूप में उगाया जाता हैं, इसका उत्पादन मुख्यतः भारत के उत्तरी–पश्चिमी रेगिस्तानी इलाकों में किया जाता है। इस फसल को अत्यधिक तापमान वाले एवं कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है। गहरे जड़–तंत्र एवं भूमि में तेजी से बढने वाली जड़ों के कारण मोठ की फसल 35 से 40 डिग्री से. जैसे उच्च ताप के होते हुए भी खेत में 30 से 40 दिन तक बिना पानी के जीवित रह सकती है। उपर्युक्त सभी गुणों के कारण ही, इतनी कठोर एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मोठ की फसल बिना किसी समस्या के आसानी से उगाई जा सकती है। शुष्क क्षेत्र की दलहनी फसल के रूप में व्याप्त अनुकूलता ही नहीं, बल्कि इसकी चौड़ी व घनी पत्तियाँ, फैलाव दार वृद्धि, भूमि को नम बनाने के साथ–साथ उसके तापमान को भी कम बनाए रखती हैं। भूमि के कटाव को रोकने में भी यह फसल महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतः प्राकृतिक भूमि सुधारक होने के कारण, इस फसल को खासकर ऐसे क्षेत्रों में जहाँ भूमि में पानी की सीमित मात्रा पायी जाती है, जैविक मृदा सुधारक तथा नमी संरक्षक के रूप में काम में लाया जा सकता है। मोठ की फसल को कृषि–उद्यान, अंतरफसल पद्धति तथा मिश्रित खेती में मूल फसल के रूप में उगाया जाता है। सीमित भौतिक एवं आर्थिक संसाधनों के बावजूद मोठ शुष्क क्षेत्रों की सर्वव्यापी फसल है।

दलहनों की अपेक्षा इसके कम क्षेत्रफल (5.9 प्रतिशत) एवं उत्पादन (1.6 प्रतिशत) के कारण इस फसल को राष्ट्रीय दलहन का दर्जा नहीं मिल पाया है, फिर भी शुष्क क्षेत्रों में उगायी जाने वाली फसलों में, मोठ ही एक मात्र विकल्प है।

मोठ का पौधा सामान्यतः 15 से 40 से.मी. लम्बा होता है। इस पर पाए जाने वाले नोड के बीच का अंतर बहुत ही कम होता है। इसकी शाखाएँ 1.5 मीटर तक लम्बी हो सकती है, जो कि जमीन के साथ क्षितिज रूप (चटाईनुमा) में बढ़ती है। गहरे कटाव वाली पत्तियों के कारण इसको विग्ना समूह की दूसरी जातियों से अलग पहचाना जा सकता है। इसके फूल पेप्लीयोनेसी समूह के होते हैं। इसके फूल 2 से 6 से.मी. लम्बे तथा फलियाँ रंग में पीली–भूरी होती हैं। प्रत्येक फली में 4 से 10 दाने होते हैं। फलियाँ रोएदार होती है। गहरे कटाव वाली बड़े आकार की पत्तियाँ इस फसल का वह विशिष्ट विभेदी गुण है, जो इसे दूसरी दलहनी फसलों से अलग करता है।

मोठ भोजन, चारे और हरी खाद का एक मुख्य स्त्रोत है। इस प्रकार, यह एक बहुउपयोगी फसल के रूप में जानी जाती है। इसकी हरी फलियां सब्जी बनाने के काम में आती है, जो बहुत ही स्वादिष्ट होती हैं।

भोजन के आवश्यक पोषक तत्वों में प्रोटीन की कमी को दूर करने का यह एक सस्ता साधन है। इसकी खेती अधिकतर कम उपजाऊ भूमि में की जाती है, जहाँ कम मूल्य वाले परंपरागत कृषि उपकरण ही काम में लाए जाते हैं। जनसामान्य का एक बहुत बड़ा समूह अपनी जीविकोपार्जन के लिए पूरी तरह से मोठ की फसल पर निर्भर रहता है। इससे मिलने वाले प्रोटीन में ऐलबुमीन तथा ग्लुटामिन के अंश अत्यधिक मात्रा में पाए जाते हैं। लाइसिन एवं ल्युसिन अमीनो अम्लों का यह एक अच्छा स्त्रोत है। मोठ के सूखे बीजों का उपयोग कई स्वादिष्ट व्यंजन (पापड़, मंगोड़ी. मोगर, भुजिया–नमकीन) बनाने में किया जाता है। मोठ से मिलने वाले बहुत–से खाद्य पदार्थों का निर्माण व्यापारिक रूप से किया जाता है। इनमें से बहुत से पदार्थों का निर्यात विदेशों में भी किया जाता है। इस प्रकार कृषि आधारित उद्योगों को इस फसल के द्वारा रोजगार के अच्छे अवसर मिलते हैं।

मोठ की उत्पादकता कम होने का कारण, इसके पौधों का अविकसित होना है, जो कि इसके सफलतापूर्वक उगाये जाने में रूकावट का प्रमुख कारण है। अतः इसकी स्वरूप प्रकार में परिवर्तन अर्थात जल्दी पकने वाली तथा अर्द्ध स्तम्भ से स्तम्भ प्रकार की पौध को ही, इसकी परम्परागत पौध प्रकार की तुलना में अधिक उत्पादक माना जाता हैं। इस प्रकार का पौध स्वरूप न केवल उत्पादन में बढ़ोतरी ला सकता है, बल्कि इसका प्रसार नए एवं अपरंपरागत क्षेत्रों में भी किया जा सकेगा। मोठ की पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति प्रतिरोधकता एवं जीवाणुज पत्ती धब्बे जैसे रोगों से बचाव, उन्नत व जल्दी पकने वाली किस्मों पर किए जाने वाले सुनिश्चित प्रयासों पर भी निर्भर करता है, जिससे इस फसल की उपज को बढाया जा सकता है। मोठ की फसल को नुकसान पहुँचाने वाले परजीवी कीट जैसे जेसिड, सफेद मक्खी, दलहन घुन एवं सफेद गौबरेला से बचाव के लिए विशिष्ट प्रबन्धन तकनीक काम में लायी जानी चाहिए, ताकि इसकी उपज में होने वाले नुकसान को कम किया जा सके।

मोठ की फसल को विकास के तौर पर पिछड़ा हुआ माना जाता है। यही कारण है कि यह सीमित क्षेत्रों में उगने वाली फसल है तथा किसानों द्वारा इसे द्वितीय प्राथमिकता दी जाती है। इसके साथ–साथ इस पर किए जाने वाले शोध कार्य और साहित्य की कमी है और जो कुछ देखने या जानने को मिलता है वह भी क्रम वार नहीं है।

मोठ का उत्पादन बढ़ाने के लिए सबसे पहले आवश्यकता यह है कि विषम परिस्थितियों वाले क्षेत्रों में दूसरी फसलों के स्थान पर मोठ को प्रमुख फसल के रूप में उगाया जाए तथा इसका प्रसार नए–नए क्षेत्रों में एवं ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अब से पहले इसकी खेती नहीं की जाती हो, उगाया जाना चाहिए। इसके उगाने से लेकर संग्रहण तक की प्रकिया को एक जगह लाकर आसान तरीके से जनसामान्य तक खासकर किसानों, उपभोक्ताओं एवं कार्यकर्ताओं तक पहुँचाया जाना चाहिए, जो कि इसके विकास में कार्यरत है। बुवाई से लेकर कटाई व संग्रहण तक की प्रक्रिया का लेखा जोखा इस पर किए जाने वाले सतत अनुसंधानों का एक सफलतम प्रयास हैं, जिन्हें विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों एवं संस्थानों में नियंत्रित परिस्थितियों में विकसित किया गया है तथा समय समय पर किसानों तक पहुँचाया जाता है। इस पुस्तिका को प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य इन्हीं समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करना है।

क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता

मोठ, विग्ना समूह की एक मुख्य दलहन है। इसका क्षेत्रफल अधिकतर सूखे भू–भागों तक ही सीमित है। सूखे क्षेत्रों में, जहाँ की वातावरणीय परिस्थितियाँ फसल की सामान्य वृद्धि में, भारी अवरोध बन कर सामने आती हैं, में भी मोठ को एक सफल फसल के रूप में उगाया जा सकता है। इन्ही मुख्य कारणों की वजह से मोठ का अधिकतम क्षेत्रफल मुख्य रूप से भारत के उत्तरी–पश्चिमी रेतीले इलाकों में निहित है। मोठ को न केवल भारत में बल्कि दूसरे देशों में भी उगाया जाता है, जैसे बर्मा के सूखे इलाके, श्रीलंका, मलेशिया, दक्षिणी चीन एवं दक्षिणी पश्चिमी अमेरिका इत्यादि। अमेरिका में मोठ की फसल चारे एवं हरी खाद के लिए उगाई जाती है। भारत में मोठ का लगभग 86 प्रतिशत उत्पादन करने वाला राज्य राजस्थान है।

यह फसल भारत के दूसरे क्षेत्रों जैसे गुजरात, हरियाणा, महाराष्ट्र आदि में भी उगाई जाती है, जबकि इसका क्षेत्रफल, पंजाब, जम्मू–कश्मीर, मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में बहुत कम है। मोठ की फसल के लिए बहुत कम पानी की आवश्यकता होती है। मोठ के पौधे के अंकुरण एवं वृद्धि के समय इसकी औसत वाष्पीकरण की दर लगभग 1.8 से 2.2 मि.मि. प्रतिदिन हेाती है, जबकि फूल और फलियाँ बनने की अवस्था में वाष्पीकरण की यह दर 4.8 मि.मि. प्रतिदिन तक बढ़ जाती है।

पिछले पाँच वर्षों (1990–1994) में, राजस्थान में उगायी जाने वाली दलहनी फसलों का कुल क्षेत्रफल लगभग 37.23 लाख हैक्टेयर, उत्पादन 8.45 लाख टन एवं उत्पादकता 226 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर आँके गये हैं। जिसमें मोठ का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता 12.78 लाख हैक्टेयर, 2.70 लाख टन, और 211 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर क्रमशः है। फिर भी यह बात महत्वपूर्ण है कि राजस्थान में सभी दलहनी फसलों की अपेक्षा अकेले मोठ से 34.32 प्रतिशत उत्पादन मिलता है, जो कि बहुत सराहनीय है। फिर भी मोठ की फसल का राष्ट्रीय स्तर पर दलहन क्षेत्रफल मात्र 5.9 प्रतिशत है, जिससे केवल 1.6 प्रतिशत दानों का ही उत्पादन मिलता है। इसके विपरीत यदि भारत के शुष्क एवं गर्म स्थानों पर उगाई जा सकने वाली खरीफ दलहनी फसलों की बात की जाए तो, मोठ एक मुख्य फसल के रूप में देखी जा सकती है। राष्ट्रीय स्तर पर मोठ के क्षेत्रफल और उत्पादन में होने वाले उतार–चढ़ाव का मुख्य कारण, वर्षा की मात्रा एवं वितरण की अनिश्चितता होना है। यही कारण है कि मोठ की फसल ऐसे क्षेत्रों में भी सफल एवं बहुआयामी फसल के रूप में उगाई जाती है। साथ ही देश भर में मोठ का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता एक स्थायी स्थिति प्राप्त कर चुका है, जो कि क्रमशः 13.52 लाख हैक्टेयर, 2.41 लाख टन एवं 215.26 कि.ग्रा./हैक्टेयर आंका गाया है। (सारणी–1)

सारणी–1: राजस्थान में पिछले बीस वर्षों में मोठ का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हैक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (कि.ग्रा./हैक्टेयर)
1981	12.62	1.46	116
1982	12.67	1.43	113
1983	12.35	3.14	254
1984	12.20	1.91	157
1985	12.46	0.46	37
1986	11.53	0.42	36
1987	12.33	0.07	06
1988	11.15	3.83	343
1989	12.07	2.40	199
1990	13.35	4.05	303
1991	11.45	1.14	100
1992	12.80	3.51	274
1993	13.36	1.50	112
1994	12.91	3.31	256
1995	12.92	1.54	119
1996	12.20	3.10	254
1997	11.23	2.99	266
1998	8.78	1.04	118
1999	7.71	0.29	39
2000	9.61	1.38	144

राजस्थान में मोठ का कुल क्षेत्रफल 11.55 लाख हैक्टेयर है, जो कि सम्पूर्ण देश के मोठ उत्पादन करने वाले कुल क्षेत्र का लगभग 85 प्रतिशत है। इतना अधिक क्षेत्रफल होते हुए भी राजस्थान में मोठ का 78.4 प्रतिशत उत्पादन ही होता है। अतः राजस्थान में मोठ के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में होने वाले परिवर्तन के आधार पर ही सम्पूर्ण राष्ट्र के क्षेत्रफल एवं उत्पादन को सुनिश्चित किया जा सकता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान के बाद महाराष्ट्र एवं गुजरात (1.25 और 0.60 लाख हैक्टेयर, क्रमशः) आते हैं। बाकी राज्यों का क्षेत्रफल नहीं के बराबर है, जैसे जम्मू–कश्मीर (1.05 हजार हैक्टेयर),

हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पश्चिमी बंगाल का क्षेत्रफल बहुत कम है, जबकि मोठ की सर्वाधिक उत्पादकता जम्मू–कश्मीर, पश्चिमी बंगाल (1000 कि.ग्रा./हैक्टेयर) एवं पंजाब (552.3 कि.ग्रा./हैक्टेयर) में है (सारणी–2)।

सारणी–2: भारत के विभिन्न राज्यों में मोठ का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता (1984–85 से 1993–94)

राज्य	क्षेत्रफल		उत्पादन		उत्पादकता	
	(हजार हैक्टेयर)	देश के कुल क्षेत्र का प्रतिशत	(हजार टन)	देश के कुल उत्पादन का प्रतिशत	(कि.ग्रा./है.)	राष्ट्रीय मानक आकड़ों पर बढ़ाव/घटाव का प्रतिशत
राजस्थान	1155.43	85.39	228.37	78.41	197.77	–8.12
महाराष्ट्र	125.43	9.27	37.16	12.75	296.26	+37.62
गुजरात	60.34	4.45	15.94	5.47	264.17	+22.72
जम्मू– कश्मीर	7.91	0.58	8.30	2.84	1049.30	+387.45
उत्तर प्रदेश	1.51	0.11	0.43	0.14	284.77	+32.29
पंजाब	1.05	0.07	0.58	0.19	552.38	+156.61
हरियाणा	0.86	0.06	0.27	0.09	313.95	+45.84
हिमाचल प्रदेश	0.36	0.02	0.10	0.03	277.77	+29.03
पश्चिमी बंगाल	0.10	–	0.10	0.03	1000.00	+364.55
कुल	**1352.99**	–	**291.25**	–	**215.26**	–

राजस्थान में मोठ की फसल के सम्बन्ध में खास बात यह है कि यहाँ देश का 86 प्रतिशत क्षेत्रफल होते हुए भी इसकी उत्पादकता सबसे कम (197.7 कि.ग्रा./है.) है। अतः मोठ के उत्पादन को बढ़ाने के लिए या तो राजस्थान में इसकी उत्पादकता को बढ़ाया जाए या फिर कुछ राज्यों जैसे पश्चिमी बंगाल, जम्मू–कश्मीर, पंजाब और महाराष्ट्र में, जहाँ मोठ का क्षेत्रफल एक लाख हैक्टेयर से ज्यादा और उत्पादकता मध्यम है, इसके उत्पादन को बढ़ाने के लिए मोठ क्षेत्रफल में बढ़ोतरी करना बेहद जरूरी है।

जहाँ तक सबसे ज्यादा मोठ उगाए जाने वाले राज्य राजस्थान का सम्बन्ध है, वहाँ के आंकड़े (1988–89 से 1996–97) बताते हैं कि 10 जिलों में सर्वाधिक मोठ उगाया जाता है। क्षेत्रफल की दृष्टि

से चुरू का नाम पहले स्थान (334260 हैक्टेयर) पर आता है, बाद में बीकानेर (262813), नागौर (191119), जोधपुर (172384), बाडमेर (148524), श्रीगंगानगर (30757), सीकर (27614), झुंझनू (20886), जालौर (15652) और जयपुर (14050) आते हैं। उत्पादन की दृष्टि से चुरू (80306), नागौर (44461 टन), जोधपुर (41085), बीकानेर (38497) और बाड़मेर (27688) मुख्य जिले हैं। राजस्थान के मुख्य मोठ उत्पादक जिलों में इसका क्षेत्रफल और उत्पादन ही नहीं इसकी उत्पादकता के आंकड़े भी बहुत अधिक बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिए इसकी उत्पादकता श्री गंगानगर में सबसे अधिक (510 कि.ग्रा./है.), जबकि बीकानेर जिले में सबसे कम (150 कि.ग्रा./है.) आंकी गई है। इस प्रकार मोठ के क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान के विभिन्न जिलों में कोई तालमेल नहीं है। चुरू, बीकानेर, नागौर एवं जोधपुर जिलों में अधिक क्षेत्रफल होते हुए भी उत्पादकता कम है। श्रीगंगानगर तथा सीकर जिलों में मोठ का क्षेत्रफल तथा राज्य के बीकानेर, चुरू, जोधपुर तथा नागौर जिलों में इसकी उत्पादकता को बढाकर सम्पूर्ण राजस्थान में मोठ उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है (सारणी–3)।

सारणी–3: राजस्थान के दस मुख्य जिलों का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता।

जिला	क्षेत्रफल (है.)	उपज (टन)	उत्पादकता (कि.ग्रा./है.)
बाड़मेर	148524.00	27688.67	190.00
बीकानेर	262813.89	38497.66	150.00
चुरू	334260.89	80306.00	240.00
श्रीगंगानगर	30757.56	15607.44	510.00
जयपुर	14050.11	4003.56	285.00
जालौर	15652.44	2728.00	170.00
झुंझनु	20886.89	4657.60	220.00
जोधपुर	172384.44	41085.11	240.00
नागौर	191119.44	44461.22	230.00
सीकर	27614.00	8466.00	310.00
कुल	**1218063.99**	**267500.28**	**220.00**
राज्य का कुल	**1238164.58**	**271300.78**	**219.12**

oooo

उन्नत किस्में

शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में मोठ का उपयोग एक बहुउद्देश्य फसल के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग भोजन, चारे एवं कई प्रकार के दूसरे व्यंजनों को बनाने में होता है। सूखे क्षेत्रों में इसका उत्पादन आसानी से किया जा सकता है, साथ ही आवश्यक पोषक तत्वों की कमी वाली भूमियों एवं ऊँचे–नीचे धरातल वाली भूमि के लिए भी मोठ अनुकूलित पायी जाती है। इन सभी गुणधर्मों के होते हुए भी मोठ का आनुवांशिक विकास अभी भी अपेक्षाकृत कम हुआ है। देशभर में मोठ की फसल विस्तरित क्षेत्र जितने (13.50 मि. हैक्टेयर) में उगाई जाती है, उसकी तुलना में इसकी आवश्यकता एवं मांग कई गुना ज्यादा है।

अत्यधिक उत्पादन लेने की दृष्टि से मोठ को नत्रजन व फॉस्फोरस उर्वरकों द्वारा पोशने से भी इसकी उपज में संतोषजनक बढोतरी नहीं हो पाती है। दूसरी ओर अत्यधिक वर्षा वाली परिस्थितियों में भी मोठ का उत्पादन सम्भव नहीं होता है। यही कारण है कि इसकी विकसित किस्मों को अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाया जाना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है।

अतः इसकी विकसित किस्में ही फसल उत्पादन की पहली और अन्तिम आवश्यकता पर खरी उतर सकती हैं। इसकी परम्परागत किस्में, जिन्हें प्राकृतिक आवास से विकसित किया गया है, अधिकतर फैलने वाली किस्में हैं, जो कि भूमि पर चटाई के समान फैल जाती है। इनकी वृद्धि धीरे–धीरे होती है और ये 100 से 120 दिन में पक कर तैयार होती है। ये किस्में (टाइप–1, टाइप–2, एम.जी.–1, बालेश्वर–12 इत्यादि) मुख्य रूप से चारा के लिये उपयुक्त किस्में हैं, जो कि सामान्य अवस्था में मुश्किल से 200 से 300 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की उपज देने की क्षमता रखती हैं।

ये किस्में शुष्कता के प्रति संवेदी तथा पीत शिरा मोजेक वाइरस रोग से ग्रसित पायी गई हैं। फलस्वरूप, ये किस्में लगभग पूरी तरह से कृषको व खेतों से दूर हो चली हैं तथा उगाई नहीं जाती हैं।

दलहन की इस फसल पर किए गये सतत, आवश्यक तथा निश्चित आनुवांशिक विकास द्वारा ऐसी किस्में विकसित की गई है, जिनका पकने का समय 90 से 100 दिन की अपेक्षा 75 से 90 दिन तक घटाया जा सका है। ये किस्में (जड़िया, ज्वाला, आई.पी.सी.एम.ओ.–912, काजरी मोठ–1) अधिक ऊपज देने के साथ–साथ रूक्ष क्षेत्रों की तेज गर्मी एवं भूमि में नमी की काफी कमी जैसी स्थितियों में भी सफलतापूर्वक उगायी जा सकती हैं (सारणी– 4)।

सन् 1994 में आर.एम.ओ.–40 के विकसित होने के साथ ही मोठ के विकास में एक नई शुरूआत हुई। कई किस्में जैसे आर.एम.ओ.–257, आर.एम.ओ.–225, आर.एम.ओ.–435 और एफ.एम.एम.–96 विकसित की गई है। (सारणी–4) ये सभी किस्में जल्दी पकने वाली किस्मों के समूह (60 से 65 दिन) में आती है। आमतौर पर यह देखा गया है कि इन किस्मों के पौधे अर्द्ध स्तम्भ से स्तम्भ प्रकार के होते

है तथा पूरी फसल एक साथ पक जाती है। इन किस्मों पर भयंकर बीमारियों जैसे पीत शिरा मोजेक वाइरस एवं सरकोस्पोरा पत्ती धब्बे का भी असर नहीं होता है। ऐसी किस्में, कम वर्षा (200 से 250 मि. मी.) एवं छोटे वृद्धि काल वाले क्षेत्रों में लगाने योग्य हैं। इस प्रकार से विकसित की गई नई किस्में अत्यधिक उपज (6 से 8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर) देने के साथ–साथ अधिक घनाव (35 प्रतिशत) वाली होती है। मोठ की कुछ उपलब्ध किस्मों के मुख्य लक्षण निम्न प्रकार हैं (प्लेट 1–3)

सारणी–4: मोठ की मुख्य पुरानी एवं नई किस्में ।

किस्में	प्रचलित होने का वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	दाने की उपज (कि.ग्रा./है.)	अनुकूल क्षेत्र	विशेषताएँ
		(अ) देरी से पकने वाली किस्में			
टाइप–1	1967	120–130	200–300		भूरे लाल रंग के दाने, मध्यम आकार; औसत चारा उत्पादन,10–14 क्विंटल/है., मुख्य रूप से चारे के लिये उपयुक्त।
टाइप–2	–	120–125	350–375	पंजाब और हरियाणा राज्य	चारे के लिये उपयुक्त, 22–25 क्विंटल/है. हरा चारा, कम कटाव वाली पत्तियाँ, बाहर की ओर निकली हुई एवं क्षितिज रूप से बढ़ती हुई पत्तियाँ।
एम.जी.–1	–	110–115	350–450	गुजरात के क्षेत्र	पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति अति संवेदनशील, लम्बे आकार के पौधे (45–55 से.मी.) कम घनाव (10–12 प्रतिशत)।

किस्में	प्रचलित होने का वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	दाने की उपज (कि.ग्रा./है.)	अनुकूल क्षेत्र	विशेषताएँ
बालेश्वर–12	–	110–115	400–475	गुजरात के क्षेत्र	पीत शिरा रोग के प्रति अति संवेदनशील, लम्बे प्रकार के पौधे, 15–17 क्विंटल/है. हरे चारे की उपज, भूरे और मध्यम आकार के बीज (100–दानों का वजन 2.2 ग्राम), 23–25 प्रतिशत तक दानों की मात्रा।
		(ब) मध्यम अवधि की किस्में			
जड़िया	1980	85–90	450–500	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	फैलकर बढ़ने की वृद्धि, गहरे भूरे रंग के बीज, मध्यम आकार के बीज (100–बीजों का वजन 2.0– 2.5 ग्राम) पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति संवेदनशील, 10–12 क्विंटल/हैक्टेयर हरे चारे का उत्पादन, 15–20% घनाव।
ज्वाला	1985	80–90	500–550	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति प्रतिरोधी, 17–18 क्विंटल/ हैक्टेयर चारे का औसत उत्पादन, 25–28% घनाव।

किस्में	प्रचलित होने का वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	दाने की उपज (कि.ग्रा./है.)	अनुकूल क्षेत्र	विशेषताएँ
मरू मोठ	1989	80–85	500–550	सम्पूर्ण राजस्थान के कृषि योग्य क्षेत्र	कम फैलाव वाली किस्म, सरकोस्पोरा पत्ती के धब्बों की बीमारी से कम प्रभावित, मिश्रित कृषि के लिए अधिक उपयोगी।
आई.पी. सी.एम. ओ.–800	1989	80–85	450–500	पश्चिमी राजस्थान	फैलावदार किस्म, चौड़ी तथा गहरे कटाव वाली पत्तियाँ, 22–24% प्रोटीन की मात्रा, 20–25% घनाव।
आई.पी. सी.एम. ओ.–912	1994	75–85	400–500	राजस्थान	पीत शिरा मोजेक वाइरस और जीवाणुज अंगमारी के प्रति प्रतिरोधक, संकुचित प्रकार की पत्तियाँ
काजरी मोठ–1	1999	72–75	500–650	सम्पूर्ण देश के वर्षा पर आधारित क्षेत्र	अर्द्ध स्तम्भ प्रकार के पौधे, 24–25% तक दानों में प्रोटीन की मात्रा पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति प्रतिरोधक।
		(स) जल्दी पकने वाली किस्में			
आर.एम. ओ. –40	1994	62–65	600–800	देश के रुक्ष क्षेत्र	जल्दी पकने वाली, स्तम्भ प्रकार, एक साथ वृद्धि, सूखे और पीत शिरा मोजेक वाइरस के संक्रमण के प्रति प्रतिरोधक, बहुत कम पंक्तिवार दूरी पर लगाने

कम उपज वाली पुरानी, परम्परागत किस्म – जडिया

पीत शिरा वायरस प्रतिरोधी, अर्द्ध स्तम्भाकार, शुष्क रोधक किस्म
काजरी मोठ – 1

प्लेट – 1

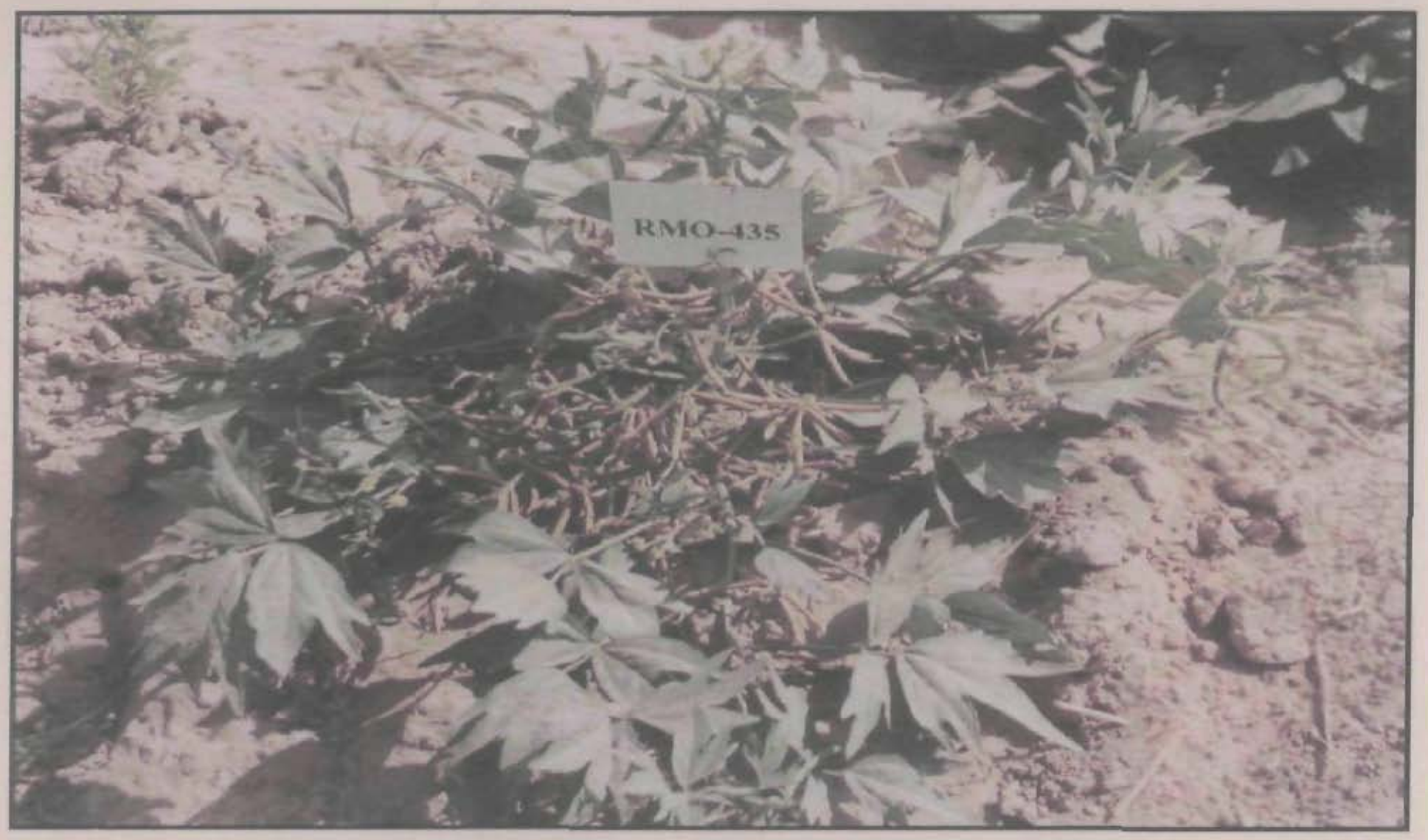

अधिक प्रोटीन युक्त, अधिक उपज देने वाली किस्म : आर एम ओ – 435

अर्द्ध स्तम्भाकार, अधिक उपज तथा भूसे वाली अगेती किस्म – आर एम ओ – 257

अधिक उपज वाली, अगेती, स्तम्भाकार किस्म – आर एम ओ – 40

अधिक उपज वाली, अगेती किस्म – आर एम ओ – 255

प्लेट – 3

किस्में	प्रचलित होने का वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	दाने की उपज (कि.ग्रा./है.)	अनुकूल क्षेत्र	विशेषताएँ
					योग्य, छोटे प्रकार के पौधे, 30–32 प्रतिशत घनाव
आर.एम.ओ. –257	1997	64–66	600–800	भारत के रुक्ष एवं अर्द्ध रूक्ष क्षेत्र	अर्द्ध स्तम्भ वृद्धि प्रकार, 18–20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर चारे की उपज, 3–6 शाखाएँ / पौधा, पीत शिरा मोजेक वाइरस से कम संक्रमित।
एफ.एम.एम. –96	1997	58–60	500–700	शुष्क एवं कम वर्षा वाले क्षेत्र	अत्यधिक जल्दी पकने वाली किस्म, छोटे प्रकार के पौधे, स्तम्भ वृद्धि प्रकार, एक साथ पकने वाली
आर.एम.ओ. –225	1999	62–65	600–700	वर्षा पर आधारित रुक्ष एवं अर्द्ध रुक्ष क्षेत्र	अर्द्ध स्तम्भ प्रकार, हल्के भूरे रंग के बीज, सूखे एवं पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति प्रतिरोधक, 17–20 क्विंटल / हैक्टेयर चारे की उपज।
आर.एम.ओ. –435	2001	64–67	600–700	देश के शुष्क एवं कम वर्षा वाले क्षेत्र	सूखे एवं पीत शिरा मोजेक वाइरस के प्रति प्रतिरोधक, अर्द्ध प्रसारित वृद्धि प्रकार, आर.एम.ओ. – 257 से 10–12 प्रतिशत अधिक उपज, चौड़ी और गहरे हरे रंग की पत्तियाँ।

शस्य विज्ञान

आवश्यक संसाधनों की कमी होते हुए भी दलहनी फसलों से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए पौध प्रबन्धन एक अति आवश्यक शस्य क्रिया है। जिन क्षेत्रों की भूमि कृषि योग्य नहीं है तथा भूमि की उत्पादकता बहुत ही कम है, ऐसे क्षेत्रों में निश्चित एवं सीमित संसाधनों के साथ खेती करना, आवश्यक उन्नत कृषि उपकरणों का कम होना तथा आर्थिक रूप से कमजोर किसानों द्वारा मोठ की फसल का उत्पादन स्तर बढ़ाया जाना एक बहुत बड़ी समस्या है। अतः कृषि के लिए आवश्यक अवयवों को प्राथमिकता के आधार पर सुनिश्चित करना तथा अपनाया जाना बेहद आवश्यक है, जो कि प्रमुख रूप से आसान, सस्ता व टिकाऊ तथा सुविधाजनक होना चाहियें। इस प्रकार के आवश्यक कृषि अवयवों का मोठ की फसल उगाने के लिए बहुत ही कम उपयोग किया गया है, तथा इच्छित उत्पादन प्राप्त करने के लिए इनको प्रयोग में लाना बहुत आवश्यक है। इस प्रकार से अपनायी जाने वाली आवश्यक कृषि तकनीकें, अच्छी उत्पादकता देने के कारण, समाज के अशिक्षित एवं निर्बल देहाती वर्ग के बीच अपना महत्वपूर्ण स्थान बना सकती है। इन सबके साथ यह भी आवश्यक है कि फसल के उत्पादन से जुड़े ग्रामीण वर्ग के लोग, जो कि हमेशा से अपने परम्परागत तरीके से खेती करते आ रहे हैं, उन तरीकों को छोड़कर इस प्रकार की तकनीकों को अपनाएँ। अतः इस प्रकार उनके दिमाग से पुरानी धारणाओं को निकालना ही अपने आप में एक बहुत बड़ा काम है। फसल उत्पादन के कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित है जो कि उच्च तकनीकों को अपनाने में मुख्य भूमिका निभा सकते हैं।

भूमिः

मोठ के लिए हल्की, रेतीली भूमि जिसमें जल निकास का अच्छा प्रबंध हो, सबसे अनुकूल पायी गई हैं। मोठ की फसल को भारत के उत्तरी–पश्चिमी शुष्क क्षेत्रों के रेतीले इलाकों जिनमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम पाई जाती हैं मे सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

भूमि की तैयारीः

मोठ की फसल को अकेले, मिश्रित या दूसरी फसलों (अन्तर–फसल) के साथ उगाया जाता है। अन्तर फसल के लिए, मोठ के साथ बाजरा, तिल आदि फसलों को उगाया जाता है। इसके लिए भूमि को बाजरे की फसल के अनुरूप तैयार किया जाता है, जिसे एक मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करने के बाद हैरो से जोत दिया जाता है। इस प्रकार खेत की तैयारी की जाती है और उसमें से खरपतवार पूरी तरह से समाप्त हो जाते हैं। हल्की जमीन एवं रेतीले टीलों पर बरसात होते ही बुआई कर देनी चाहिए ताकि नमी का ह्रास न हो पायें। खेत में अधिक जुताई (एक या दो से ज्यादा) नहीं करनी चाहिए, क्योंकि तेज हवा के चलने से मिट्टी की ऊपरी सतह के उड़ जाने का भय रहता है। ये तेज हवायें भूमि के ऊपरी कणों को अपने साथ उड़ा ले जाती हैं। इसलिए जुताई के बाद पाटा चलाना चाहिए, ताकि तेज हवा से भूमि के हल्के कण उड़ न पाए।

मोठ की खेती के लिए जुताई का मुख्य उद्देश्य नमी का संरक्षण एवं खरपतवार नियन्त्रण होना चाहिए। बुवाई से पूर्व गर्मी में एक गहरी जुताई अवश्य करनी चाहिए, जिससे बरसात का पानी भूमि में अधिक गहराई तक संरक्षित हो सकें।

बीज दर एवं बुवाई की विधिः

मोठ की फसल अकेले, अंतर–फसल या मिश्रित फसल के रूप में उगाई जाती है। यह दाने व चारे के लिए भी उगाई जाती है। मोठ में घनी पत्तियाँ एवं सीधी वृद्धि वाली किस्में भी उपलब्ध है। बीज की मात्रा मोठ की सीधे बढ़ने वाली (स्तम्भ वृद्धि प्रकार) या फैलने के आधार पर भी निर्भर करती है।

दाने व बीज के लिए फसल को अकेले ही उगाये जाने की स्थिति में बीज की दर 8 से 10 किलो ग्राम प्रति हैक्टेयर होनी चाहिये। चारे के लिए उगाने के वास्ते 20 से 22 किलो प्रति हैक्टेयर बीज का उपयोग किया जाना चाहियें। मिश्रित फसल के लिए, मोठ को बाजरा, तिल, ग्वार आदि के साथ बोने के लिए 2 से 5 किग्रा प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बुआई देरी से करने पर, मिश्रित फसल के लिए मोठ के बीज की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। जल्दी पकने वाली एवं स्तम्भ प्रकार की किस्मों (आर.एम.ओ.–40, आर.एम.ओ.–225 इत्यादि) को उगाने के लिए 12 से 15 किग्रा प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसमें पौधे कम फासले पर उगाए जाते हैं। वहीं विस्तारी एवं अर्द्ध विस्तारी किस्मों (ज्वाला, जडिया, आई.पी.सी.एम.ओ.–880 या काजरी मोठ–1) के लिये बीज दर लगभग 10 किग्रा प्रति हैक्टेयर रखना चाहिये।

राजस्थान के पश्चिमी इलाकों में अच्छी वर्षा (30 से 40 से.मी.) होते ही बुवाई कर देनी चाहिए अन्यथा भूमि में नमी की कमी के कारण बीजों का अंकुरण प्रभावित होता है। साथ ही तेज हवाओं के चलने से बीजों पर सूखे रेत की परत जमने का खतरा भी बढ़ जाता है। मोठ की बुवाई छिड़काव पद्धति से नहीं करके, कतार में करनी चाहिए। स्तम्भ प्रकार की किस्मों (आर.एम.ओ.–40, आर.एम.ओ.–257, आर.एम.ओ.–225, आर.एम.ओ.–435) के लिए कतार से कतार की दूरी 30–35 से.मी. और विस्तारी एवं अर्द्ध विस्तारी किस्मों (ज्वाला, जडिया और काजरी मोठ–1) के लिए 50 से 60 से.मी. रखना चाहियें। बुवाई करने के बाद उचित ढ़ंग से पाटा लगाना चाहिए, ताकि नमी का संरक्षण बना रहे तथा पक्षियों एवं कीड़ों से बीज का नुकसान भी न हो सके। यदि वर्षा विलम्ब से होती है, तो बीज की मात्रा 15 प्रतिशत तक बढ़ा देनी चाहिए, ऐसा करने से पौधों की संख्या उचित बनी रहेगी।

बुवाई का समयः

शुष्क क्षेत्रों में मोठ की अधिकतम उपज के लिए बुवाई का समय एक महत्वपूर्ण क्रिया है। मोठ की खेती प्रायः बारानी (वर्षा पर आधारित क्षेत्र) की जाती है, अतः मानसून की अच्छी वर्षा (30 से 40 से.मी.) होते ही बुवाई कर देनी चाहिए। शोध कार्यों से ज्ञात हुआ है कि जल्दी (जुलाई का पहला सप्ताह) बुवाई करने से मोठ की फसल की वृद्धि अधिक होती है। पौधे 50 से 60 से.मी. तक लम्बे हो जाते हैं, फलस्वरूप उत्पादन कम प्राप्त होता है। यद्यपि थोड़े विलम्ब से बुवाई करने पर पौधों की वृद्धि

कम होती है, मगर फलियाँ अधिक लगती हैं, जिससे पैदावार बढ़ जाती है। इसलिए पश्चिमी राजस्थान के रेतीले क्षेत्रों में बुवाई का उचित समय 15 से 25 जुलाई है। अधिक देरी से बुवाई करने पर पीत शिरा मोजेक वाइरस का प्रकोप बढ़ जाता है। महाराष्ट्र राज्य के लिए बुवाई का सही समय जून का अन्तिम सप्ताह है, जबकि हरियाणा एवं गुजरात राज्यों के लिए सही समय जुलाई का प्रथम सप्ताह है।

जैविक उर्वरक एवं बीज उपचार :

यह पुरानी परम्परा है कि दलहनी फसलों को फसल चक्र में शामिल करना चाहिए, क्योंकि ये फसलें वातावरण की नाइट्रोजन को ग्रहण करके भूमि को नाइट्रोजन उपलब्ध करवाती हैं, जो स्वयं व दूसरी फसलों के काम आती है। बीज को सही प्रकार के राइजोबियम संवर्धन (कल्चर) से उपचारित करने पर और भूमि की अनुकूल अवस्था होने पर, फसल की जड़ों में गाँठ (नोड्यूल) अधिक बनती है, जिनकी संख्या फूल आने की अवस्था में सबसे अधिक होती है और उसके बाद फली बनने पर लगभग समाप्त हो जाती हैं।

कृषि अनुसंधान केन्द्र, मण्डोर में कियें गयें अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि राइजोबियम किस्म एम. आर.बी.– 5 और एम.टी.–20 का उपयोग करने से गाँठों की संख्या में बढ़ोतरी होती है, जिससे मोठ की पैदावार 16.1 और 13.8 प्रतिशत क्रमशः बढ़ जाती है (तालिका–5)।

सारणी–5: मोठ की फसल में राइजोबियम किस्मों का गाँठ (नोड्यूल) के बनने व पैदावार पर प्रभाव।

राइजोबियम की किस्में	बीज की उपज (कि.ग्रा./है.)	चारे की उपज (कि.ग्रा./है.)	गाँठ/पौधा (संख्या)	सूखी हुई गांठे/ पौधा गाँठे (मि.ग्रा.है.)
एम.आर.बी.–5	520	2782.0	29.5	106.0
एम.टी.–20	510	2710.0	27.2	96.0
नियंत्रण मानक	448	2262.0	21.5	73.5

इस प्रकार, उचित प्रकार के राइजोबियम संवर्धन (कल्चर) के प्रयोग से अतिरिक्त पैदावार मिल जाती है। एक हैक्टेयर भूमि के लिए 8 से 10 किग्रा. बीजों की आवश्यकता होती है। इन बीजों को कल्चर से उपचार करने के लिए 250 ग्राम गुड़ को एक लीटर गर्म पानी में मिलाते हैं, पानी ठण्डा होने पर 625 ग्राम राइजोबियम संवर्धन (कल्चर) को डालकर अच्छी तरह मिलाते हैं, इस गुड़ (कल्चर) के घोल को बोने वाले बीजों पर छिड़काव पद्धति से डालते हैं और अच्छी तरह मिला देते हैं, ताकि सभी बीजों पर संवर्धन (कल्चर) की एक तह बन जाए। अध्ययन से यह भी पता चला है कि घोल बनाने में गुड़ के स्थान पर 400 ग्राम गोंद भी काम में लाया जा सकता है। राइजोबियम संवर्धन (कल्चर) के उपचार से पूर्व बीजों को कवक नाशक दवा जैसे कैप्टान, थीराम या एग्रोसान जी.एन. (एक किलो बीज में 1 से 3 ग्राम) से उपचार किया जाना चाहिये।

उर्वरक प्रबन्धनः

मोठ की खेती प्रायः हल्की एवं अव्यवस्थित भूमि में की जाती है, जिसमें कार्बनिक पदार्थों की कमी होती है। इसलिए भूमि के भौतिक सुधार और कार्बनिक खाद की कमी को पूरा करने के लिए 20 से 25 टन/हैक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद, बुवाई के 15 से 20 दिन पहले डालनी चाहिए। इससे भूमि में पानी ग्रहण करने के क्षमता भी बढ़ जाती है। मोठ दलहनी फसल होने के कारण, अपनी नाइट्रोजन की आवश्यकता को वातावरण से पूरा कर लेती है। फिर भी बुवाई के समय 10 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर डालनी चाहिए। दलहनी फसलों में, जिसमें मोठ भी शामिल है, फास्फोरस उर्वरक का ज्यादा महत्व होता है क्योंकि ये भूमि से अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाकर फसल के लिए उपयोगी बनाती है। कृषि अनुसंधान केन्द्र, मण्डोर के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि 20 किलो की तुलना में 40 किलो फास्फोरस प्रति हैक्टेयर देने से मोठ की पैदावार करीब 20 प्रतिशत बढ़ जाती है। अतः मोठ की फसल के लिए 10 किलो नाइट्रोजन व 40 किलो फास्फोरस प्रति हैक्टेयर की मात्रा उचित पायी गई है।

खरपतवार प्रबन्धनः

बारानी खेती (वर्षा पर आधारित) में निराई–गुड़ाई पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योंकि खरपतवार के अवांछित पौधे बिना बोए खेत में उग जाते हैं और ये फसलों के पोषक तत्व, पानी, प्रकाश, हवा आदि के लिए फसल से संघर्ष करते हैं, जिससे फसल प्रारम्भिक अवस्था में ही कमजोर पड़ जाती है व ऊपज में कमी आ जाती है। यदि इन पर नियन्त्रण नहीं किया जाए तो ऊपज में 15 से 40 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। अतः बुवाई के 20 से 25 दिन के बाद खरपतवार निकाल देना चाहिए। इससे फसल की अच्छी वृद्धि एवं फैलाव से खरपतवार की वृद्धि रूक जाती है। इसके अतिरिक्त बुवाई से पूर्व जुताई एवं हैरोइंग करने से खरपतवार नियन्त्रण में मदद मिलती है। बीकानेर, फतेहपुर और एस. के. नगर में किए गए अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि बुवाई के 30 दिन बाद खुर्पी से खरपतवार को निकाल देना और फ्लूक्लोरिलिन (1 किलो प्रति हैक्टेयर) नामक कीट नाशक दवा का बुवाई से पूर्व प्रयोग करके खरपतवारों को पूरी तरह से नियन्त्रित किया जा सकता और और मोठ की ऊपज को बढ़ाया जा सकता है (सारणी–6)।

सारणी–6: खरपतवार नाशक का मोठ की ऊपज (पैदावार) पर प्रभाव

उपचार	मोठ की ऊपज (कि.ग्रा./है.)				
	1997	1998	1999	2000	औसत
खरपतवार सहित फसल	695	581	205	161	410
बुवाई के 30 दिन बाद हाथों से खरपतवार निकालना	1093	878	371	337	670
फ्लूक्लोरोलिन (1 किलो/है.) नामक नाशक दवा का प्रयोग	910	853	427	328	629

फसल कटाई एवं भण्डारण:

अन्य दलहनी फसलों की तरह मोठ के बीजों का नुकसान भी तिड़कने, लाने ले–जाने और भण्डारण के समय होता है। इन कारणों से 8–20 प्रतिशत या कभी– कभी इससे भी अधिक नुकसान हो सकता है। अतः कटाई एवं भण्डारण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। फसल की कटाई, पत्तियाँ सूखने एवं फलियाँ पीली पड़ते ही कर लेनी चाहिए। सभी पौधों को एक ढ़ेर में रखकर तीन से पाँच दिन तक धूप में सुखाना चाहिए। इसकी मंढ़ाई (थ्रेसींग) लकड़ी या डण्डे से पीटकर, बैलों द्वारा या मंढ़ाई यंत्र (थ्रेसर) से की जाती है। मंढ़ाई के बाद, बीजों को धूप में सुखाना चाहिए, जिससे बीजों में नमी की मात्रा 8 से 10 प्रतिशत से अधिक न रहे। बीजों को हवा रहित कनस्तरों जैसे, गनी बैग्स या कपड़े की थेलियों में भरकर रखना चाहिए। यदि बीजों को बुवाई के लिए रखना है तो उसमें एन्डोसल्फान नामक चूर्ण मिलाकर रखना चाहिए और यदि मोठ के बीजों को खाने के लिए उपयोग में लाना है तो उसको बिना किसी उपचार के रखना चाहिए।

रोग एवं उनका प्रबन्धन

मोठ की फसल का उत्पादन शुष्क क्षेत्रों में दलहनी फसल के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग मवेशियों के चारे के लिए भी किया जाता है। मोठ के पौधों की जड़ों में नाइट्रोजन संरक्षी गाँठे पायी जाती हैं, जिनमें राइजोबियम नामक जीवाणु होते हैं। ये जीवाणु भूमि में नाइट्रोजन की मात्रा के संरक्षक का कार्य करते हैं, जिसके कारण यह फसल शुष्क एवं कठोर वातावरण में भी अनुकूल पायी गई है। इस फसल में अनुकूलता के लक्षण होते हुए भी, इसका उत्पादन समस्यापूर्ण शुष्क क्षेत्रों में कुछ कारणों से प्रभावित होता है, जैसे वातावरण की अनिश्चितता, भूमि का अनउपजाऊपन, बीमारियों द्वारा होनें वाला नुकसान, परजीवी–कीटों की समस्याएँ आदि। मोठ की फसल बहुत से कीटों एवं रोगजनक परजीवियों द्वारा प्रभावित होती है, लेकिन फिर भी अभी तक इनके प्रबन्धन एवं रोग उपचार की दिशा में बहुत कम कार्य किया गया है। इनके कारण अनाज और चारे के उत्पादन एवं गुणवता में भारी गिरावट आ जाती है। रसायनों द्वारा इन रोगों पर नियंत्रण पाना किसानों के लिए कठिन है। प्रतिरोधक किस्मों का उपयोग कुछ सीमा तक इसमें सहायक हो सकता है। पिछले 20 वर्षों में, मोठ के रोगों के कारण, लक्षण और प्रबन्धन के लिए अच्छे प्रयत्न किए गए हैं। इन रोगों के कारणों में अजैविक, मध्यम जैविक तथा जैविक कारण प्रमुख है।

1. अजैविक कारणः

1. यांत्रिकी (मैकेनिकल) हानिः सूखे और गर्म मौसम में अत्यधिक हवा के वेग से भूमि की ऊपरी पर्त उड़ती है। गर्म मिट्टी के कण जब पौधों की पत्तियों पर लगते हैं, तो पत्तियों की बाह्य चर्म फट जाती है। जिससे पत्तियों में छोटे–छोटे छेद हो जाते हैं और अंत में पौधे सूखे–पीले होकर मर जाते हैं। सामान्यतः फसल के पकने की अवस्था में जब मिट्टी में नमी की कमी होती है तथा अधिक तपन वाली गर्म हवाएँ चलती हैं, तब यह अत्यधिक देखने को मिलता है।
2. गर्म हवाः सितम्बर के अंत में जब भूमि की नमी लगभग खत्म हो जाती है और बहुत अधिक हवा चलती है, तो उगने वाली पत्तियाँ अव्यवस्थित हो जाती है। जिसके कारण पौधे पीले और सूखे होकर मर जाते हैं।

इन प्राकृतिक हानियों के नियंत्रण के उपाय बहुत कठिन है। फसल की जल्दी बुवाई करके या जल्दी पकने वाली किस्मों की बुवाई कर इन हानियों से कुछ सीमा तक बचा जा सकता है।

2. मध्यमवर्गीय जैविक कारणः

1. **पीत शिरा मोजेक वायरस** : पीत शिरा मोजेक, मोंठ की एक बहुत गंभीर बीमारी है। यह शुरू में नई नई पत्तियों पर दिखाई देती है। विशेष रूप से यह मोठ के पौधों की वृद्धि, फलियों की संख्या और उपज को प्रभावित करती है। पीत शिरा मोजेक रोग के वाहक के रूप में सफेद मक्खी (बेमीसीया टेबेसाइ) इसके वाइरस को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लेकर जाती है।

2. **नुकसान** : पौधों की वृद्धि की किसी भी अवस्था में इस बीमारी का प्रकोप हो सकता है। यह पौधे की धीमी वृद्धि, फलियों का देरी से आना, कम फलियों का लगना, पत्तियों में हरे वर्णक की कमी आदि का कारण बन जाता है, जिससे उत्पादन में भारी कमी आती है और जो कभी–कभी 90 प्रतिशत तक हो सकती है। अध्ययन से यह भी पता लगा है कि बीमारी के तीव्रता से बढ़ने पर उत्पादन में 100 प्रतिशत तक कमी हो सकती है।

लक्षण:

1. रोग की प्राथमिक अवस्था में पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो तेजी से बढते जाते हैं।
2. इन पीले रंग के धब्बों के साथ ही कुछ भागों पर हरे रंग का स्थान भी रहता है, जो बाद में पीला हो जाता है।
3. पूरी तरह से पीली हुई पत्तिया अंत में सफेद रंग की दिखाई देने लगती हैं और बाद में ये सूख कर झड़ जाती है।
4. पौधों की वृद्धि रूक जाती है।
5. फलियाँ बहुत ही छोटे आकार की तथा कुछ मुड़ी हुई होती है, जिनमें बहुत ही कम मात्रा में दानें बन पाते हैं।
6. इस प्रकार के पौधे सामान्य से कम कद के तथा पीले भूरे सोने के जैसी दिखने वाली पत्तियों वाले होते है।

नियन्त्रण:

1. क्षेत्रीय व पुरानी किस्में पीत शिरा वायरस के संक्रमण से बहुत अधिक संवेदनशील होती हैं । इन किस्मों की जगह पीत शिरा मोजेक वायरस प्रतिरोधक किस्म काजरी मोठ–1 तथा जल्दी पकने वाली किस्मे जैसेः आर.एम.ओ–40, आर.एम.ओ–257, आर.एम.ओ –225 उगाई जा सकती हैं। ये सभी किस्में पीत शिरा मोजेक रोग के प्रति प्रतिरोधकता को दर्शाती हैं (प्लेट – 4)
2. इस रोग की वाहक सफेद मक्खी की संख्या में बढोतरी, इस रोग को तेजी से फैलाने में सहायक होती है। फतेहपुर में किए गए अध्ययनों के अनुसार, रोग के नियत्रंण के लिए फसल उगाने के 35 दिनों बाद किए गए मोनोक्रोटोफोस (0.04%) के छिड़काव से काफी लाभ होता है। रोगोर (0.02%) का 15 दिनों के अंतराल में दो बार छिड़काव भी इस रोग के नियंत्रण में सहायक होता है।
3. ग्वार की फसल, रोग की वाहक सफेद मक्खियों के फैलाव को रोकती है। फलस्वरूप, पीत शिरा मोजेक रोग जिसका फैलाव सफेद मक्खियों द्वारा होता है, को रोकने के लिये मोठ की फसल के साथ ग्वार की फसल भी लगानी चाहिए।

पीत शिरा मोजेक वायरस प्रतिरोधी किस्म – ज्वाला

मोठ में पीत शिरा मोजेक वायरस का प्रकोप

3. जैविक कारणः (जीवाणुज अंगमारी या जीवाणुज पर्ण चित्ती)

यह बीमारी मुख्यतः राजस्थान में पायी जाती है। वातावरण में आर्द्रता की अधिकता होने पर यह रोग तेजी से फैलता है। ज़ेन्थोमोनास फेसीयोलाई की एक भिन्न जाति इस बीमारी के संक्रमण के मुख्य जीवाणु के रूप में निर्देशित की गई है।

लक्षणः

1. पत्तियों पर भूरे रंग के छोटे–बड़े और अनियमित आकार के उतकक्षयी धब्बे दिखाई देते हैं।
2. ये धब्बे पत्तियों की ऊपरी सतह पर ज्यादा उभरे हुए होते हैं।
3. पत्तियों की सतह पर छोटे आकार के, जल से भरे हुए, गोल या अनियमित आकार के धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे आकार में बढ़ते जाते हैं और भूरे से काले रंग के हो जाते हैं।
4. रोग की अधिकता होने पर पत्तियाँ गिर जाती है।
5. अंत में पर्णवृंतों, टहनियों और फलियों पर फैले हुए भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

नियन्त्रणः

1. कुछ किस्में, जैसे आर डी एम–63, आर डी एम–168 और आर डी एम–182 रोग प्रतिरोधी पायी गई हैं।
2. जीवाणुज पर्ण चित्ती या जीवाणुज अंगमारी के प्राथमिक संक्रमण को कम करने के लिए बीजों को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 0.01 प्रतिशत+ कैपटेन (एक किलो बीज में 2 ग्राम) से उपचारित करना चाहिए।
3. जीवाणुज पर्ण चित्ती या जीवाणुज अंगमारी की तीव्रता को कम करने के लिए ब्लीटोक्स (0.3 प्रतिशत) स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 0.01 प्रतिशत + ब्लीटोक्स (0.3 प्रतिशत)/बैवीस्टिन (0.5 प्रतिशत) + ब्लीटोक्स (0.3 प्रतिशत) का तीन बार छिड़काव करना चाहिए। जैसा कि नीचे दी गई सारणी में दर्शाया गया है। (सारणी–7)

सारणी–7: मोठ (किस्म–जड़िया) की जीवाणुज पर्ण चित्ती और जीवाणुज अंगमारी बीमारियों के प्रबन्धन के लिए छिड़काव सूची (3 वर्षों की औसत दर 1987–89)

उपचार	संक्रमण की दर (औसत)	श्रोग नियन्त्रण (प्रतिशत)	बीज उपज (कि.ग्रा./ हैक्टेयर)	कन्ट्रोल की तुलना में बढ़ोतरी (प्रतिशत)	चारा उपज (क्विंटल/ हैक्टेयर)
ब्लीटोक्स 50 डब्ल्यू.पी. (0.3%)	19.35	64.43	4.29	14.09	19.56
स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.01%) ब्लीटोक्स 50 डब्ल्यू.पी. (0.3%)	30.50	48.66	4.58	21.80	19.23
बेवीस्टीन 50 डब्ल्यू. पी (0. 05%) ब्लीटोक्स 50 डब्ल्यू.पी. (0.3%)	21.65	63.56	4.32	14.89	2.54
नियंत्रण मानक	59.41	–	3.76	–	18.16

स्त्रोतः टेक्नीकल मोठ बीन रिपोर्ट नम्बर–2: एग्रीकल्चर रीसर्च स्टेशन, फतेहपुर।

4. कवक से होने वाली बीमारियाँ :

मेकरोफोमिना फेसीयोलीना नामक कवक मोठ की फसल के लिए अधिक विनाशकारी एवं शक्तिशाली रोगजनक है। मोठ की फसल वाले सभी क्षेत्रों में यह कवक जड़ विगलन, बीज विगलन, छोटे पौधों की अंगमारी और कॉलर विगलन आदि रोगों के कारक है। मोठ की फसल को एक ही खेत में बार–बार उगाने से इस कवक की संख्या में बढ़ोतरी होती है। यह गर्म और सूखे क्षेत्रों की भूमियों में बहुलता से पायी जाती है। नए अंकुरित हुए पौधों एवं फसल के पकने की अवस्था में इनसे अत्यधिक नुकसान होता है।

लक्षण :

1. संक्रमित बीज छोटे और विकृत आकार के हो जाते हैं, जिनमें से बहुत से बीज अंकुरण में असमर्थ होते हैं।
2. छोटे–छोटे उगने वाले नए पौधों का कॉलर भाग लाल–भूरे रंग का हो जाता है और धीरे–धीरे यह रंग फीका पड़ने लगता है।
3. बाद में फीके पड़े हुए ये भाग गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। ये संक्रमित नए पौधे अन्ततः मर जाते हैं।

नियन्त्रण:

1. बीजों को कारबेनडैजीन (2 ग्राम/कि.ग्रा.) से उपचारित करना, रोग के नियंत्रण का सबसे उत्तम तरीका है।
2. बीजों को बैवीस्टिन (2 ग्राम/कि.ग्रा.), कैपटेन (3 ग्राम/कि.ग्रा.) और टॉपसिन एम–70 (2 ग्राम/कि.ग्रा.) से उपचारित करने पर बीमारी की तीव्रता एवं पौधों की मृत्यु को रोका जा सकता है।
3. खेतों की भूमि सूख जाने और तापमान बढ़ जाने पर सिंचाई कर देनी चाहिए।
4. टी. हारजिएनम नामक जीवनियंत्रक, मैकरोफोमिना फेसियोलिना की वृद्धि को रोकता है।

यह बीमारी मुख्यतः अत्यधिक वर्षा और अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में दिखाई देती है। भूमि, बीज और प्राकृतिक रूप से संक्रमित पौधे ही इस बीमारी का मुख्य कारण है। 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान और 85 प्रतिशत तक सापेक्षित आर्द्रता होने पर यह बीमारी तेजी से फैलती है।

लक्षण :

1. पत्तियों की दोनों सतहों पर छोटे, गोल, हल्के रंग के जाल जैसे धब्बे दिखाई देते हैं।
2. पौधों के सभी भागों मुख्यतः फूलों पर ये धब्बे अधिक दिखाई देते हैं।

नियन्त्रण:

1. पौधों को पास–पास नहीं उगाना चाहिए।
2. बीजों को बैनलेट और ब्रैसीकोल से उपचारित करके बीजों से होने वाले संक्रमण को पूरी तरह से रोका जा सकता है।

परजीवी-कीट प्रबन्धन

राजस्थान के अधिकतर सूखे क्षेत्रों में मोठ की फसल प्रचुरता से उगाई जाती है। ऐसे क्षेत्रों की प्रतिकुल परिस्थितियों के प्रति अनुकूलता वाले बहुत से गुण मोठ की फसल में देखने को मिलते हैं। अतः जहाँ दूसरी फसलें इन कठिन परिस्थितियों में नहीं उगाई जा सकती, मोठ की फसल को सफलतापूर्वक उगाकर अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। अनुकूलता वाले लक्षणों में प्रमुख रूप से इनका गहरा जड़तंत्र, तेज गर्मी और सूखे की अवस्था में उगने की क्षमता, अधिक प्रकाश संश्लेषण की योग्यता एवं इसकी चौड़ी पत्तियाँ शामिल है। अपने उपजाऊपन तथा दूसरे बहुत से अनुकूलित लक्षणों के कारण पानी की कमी और अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में भी मोठ को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है, लेकिन फिर भी परजीवी कीटों से होने वाले नुकसान के प्रति यह संवेदनशील है। ऐसे बहुत से कीट, मोठ की फसल पर पाए जाते हैं, जो परजीवी के रूप में पौधों पर आश्रय लेते हैं और इसे काफी अधिक मात्रा में नुकसान भी पहुँचाते हैं, जिसका सीधा प्रभाव मोठ की उत्पादन क्षमता पर पड़ता है। अतः मोठ पर पाए जाने वाले ये परजीवी कीट गम्भीर चिन्ता का विषय बनते जा रहे हैं। अधिक तापमान वाले सूखे मौसम में इस फसल पर कीटों की संख्या में वृद्धि हो जाती है। करींब 20 से भी अधिक प्रकार के परजीवी कीट मोठ की फसल को उसके बोने से लेकर कटने तक नुकसान पहुँचाते हैं। दानों को खाकर नष्ट कर देते हैं। मोठ की फसल पर पाए जाने वाले बड़े परजीवियों में थ्रीप, जेसिड, सफेद मक्खियाँ, काले रंग के झींगुर, दाल के झींगुर और सफेद गोबरैला शामिल है, जबकि छोटे परजीवियों में दीमक, मकड़ी तथा हरी घास की सतह पर रहने वाले पतंगे सम्मिलित हैं।

परजीवी कीटों से होने वाले नुकसानः

मोठ की फसल को नुकसान पहुँचाने वाले परजीवी कीटों पर बहुत सारे अनुसंधान किये जा चुके हैं, जिनका प्रमुख उद्देश्य इन परजीवी कीटों की रोकथाम करना तथा कुछ नई रोग प्रतिरोधी किस्मों को विकसित करना है, परन्तु मोठ पर लिखे एवं प्रकाशित अनुसंधान पत्र, समाचार पत्र एवं सूचना पुंस्तिकाएँ बहुत ही कम हैं।

गुजरात के एस.के. नगर क्षेत्र में मोठ की फसल को करीब 8.8 प्रतिशत होने वाला नुकसान फली छेदक कीटों के कारण होता है। राजस्थान के जोधपुर जिले के कृषि क्षेत्रों में मोठ की फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों में जेसिड एवं सफेद मक्खियाँ शामिल है, जो कि करीब 70 प्रतिशत नुकसान के कारण हैं। जोबनेर की पारिस्थितिक परिस्थितियों में होने वाला यह नुकसान करीब 56 प्रतिशत आँका गया है। वे परजीवी कीट जो कि भूमि में पाए जाते हैं, पौधों पर पाए जाने वाले कीटों की तुलना में कहीं गुना अधिक नुकसान पहुँचाते हैं। मोठ की फसल पर पाए जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण परजीवी इस प्रकार है–

1. जेसिडः

छोटी पौध अवस्था से लेकर, कटाई तक यह परजीवी सक्रिय रहता है। इसके निम्फ एवं बड़े जीव कोशिका के रस को चूसते हैं। इसके बड़े जीव, एक छोटे कीट के बराबर होते हैं और पत्तियों पर रहते हैं। एक साल में जेसिड कई बार जनन करते हैं।

लक्षण :

इन परिजीवियों के आक्रमण से पत्तियाँ भूरे रंग की हो जाती है। बाद में ये पत्तियाँ मुड़ जाती है और अन्त में सूखकर गिर जाती है।

नियन्त्रण के तरीके :

1. खरीफ में मोठ की बुवाई जल्दी (लगभग 10 जुलाई तक) करने से जेसिड एवं थ्रीप्स के आक्रमण को नियन्त्रित किया जा सकता है।
2. मोठ की फसल के साथ बाजरा (4:1 अनुपात में) उगाने से जेसिड की संख्या में कमी हो जाती है।
3. निश्चित समय अन्तराल पर मोनोक्रोटोफास/डाईमीथोएट (0.03 प्रतिशत) या लीनडेन (0.01 प्रतिशत) का छिड़काव करके जेसिड पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।

2. सफेद मक्खी :

सफेद मक्खी पीत शिरा मोजेक रोग वाहक के रूप में इसके वायरस को एक पौधे से दूसरे पौधे में ले जाने का कार्य करती हैं। सितम्बर के माह में सफेद मक्खी का आक्रमण अपने शिखर पर होता है। इसके निम्फ और बड़े जीव पत्तियों की कोशिकाओं से रस को चूसते हैं।

नियन्त्रण के तरीके :

1. खरीफ में मोठ की बुवाई जल्दी (लगभग 10 जुलाई तक) करने से सफेद मक्खी के आक्रमण को नियन्त्रित किया जा सकता है।
2. मोठ की फसल के साथ बाजरा (4:1 अनुपात में) उगाने से सफेद मक्खी की संख्या में कमी हो जाती है।
3. निश्चित समय अन्तराल पर मोनोक्रोटोफोस (0.25%)/डाईमीथोएट (0.15%) का छिड़काव करके सफेद मक्खी पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।

3. थ्रीपः

ये गुजरात और राजस्थान के बड़े परजीवी कीटों में से एक हैं। फूल बनने की अवस्था में ये कीट सक्रिय हो जाते हैं। निम्फ और बड़े जीव फूलों का रस चूसते है, जिससे फूल मुरझा कर गिर जाते हैं।

इनकी अधिक संख्या होने पर नई खिलती कलियाँ और फूल झड़ने लगते हैं।

जल्दी बुवाई (लगभग 30 जून तक) करके फसल को थ्रीप के द्वारा होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। देरी होने पर अधिक संख्या में थ्रीप फसल पर आक्रमण कर उसे नुकसान पहुँचाते हैं।

4. सफेद गौबरेला :

वर्षा पर आधारित फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले प्रमुख कीटों में से सफेद गौबरेला मुख्य है। वर्षा के तुरन्त बाद भूमि से छोटे आकार के कीट बाहर निकल आते हैं तथा पौधों की पत्तियों को खाना शुरू कर देते हैं। पुनः भूमि में प्रवेश करने से पहले पत्तियों की सतह पर अंडे देते हैं। ये एक वर्ष में केवल एक बार ही जनन करते हैं। जुलाई से लेकर अक्टूबर माह तक ये पौधों की जड़ों में रहकर अपना भोजन प्राप्त करते हैं।

लक्षण :

आक्रमण के बाद पौधे पीले रंग के नजर आने लगते हैं। पौधे मुरझा कर मर जाते हैं।

प्रबन्धन के तरीके :

1. पौधों के पास छोटे आकार के पिंजरे रखकर भृंगुरों की एकत्रित किया जाना सबसे सरलतम उपाय है।
2. यह कार्य हाथ से भी किया जा सकता है।
3. भूमि में छिपे गौबरेलों को बाहर निकालने के लिए खेत की जुताई कर देनी चाहिए। बाहर आने पर इनको आसानी से पकड़ा जा सकता है।

बीज संग्रहण से सम्बन्धित परजीवीः

संग्रहित बीजों को परजीवियों द्वारा होने वाला नुकसान भी एक गम्भीर समस्या है। अत्यधिक नुकसान पहुँचाने वाले छोटे परजीवियों में केल्सोब्रुकस चाइनेनसिस प्रमुख है। इन छोटे परजीवियों का आक्रमण अप्रेल से सितम्बर माह के मध्य तक होता है। इनमें से कुछ परजीवी बीज भण्डारण के समय ही बीजों के साथ मिल जाते हैं।

नियन्त्रण के तरीकेः

1. बीजों की आर्द्रता को कम (10 प्रतिशत तक) करने के लिए इन्हें धूप में सुखाया जाना चाहिये।
2. बीज भंडारण के समय बीजों को, नीम की पत्ती के चूर्ण तथा सरसों के तेल से उपचारित करना चाहिए।

मोठ के उपयोग एवं गुणवत्ता

राजस्थान के उत्तरी–पश्चिमी सूखे भू–भागों में मोठ का उत्पादन प्रचुरता से होता है। बहुत से अनुकूलित लक्षणों के कारण पारिस्थितिक तथा सामाजिक रूप से अपनाई जा चुकी मोठ की फसल का उपयोग अधिकतर ग्रामीण वर्ग के लोगों द्वारा किया जाता है। जन सामान्य के बीच प्रचलन का मुख्य कारण इसके बहुउपयोगी गुण तथा निम्न वर्ग की आवश्यकता पूर्ति करना है। अस्थिर जलवायु एवं मौसम परिवर्तन जैसी विपरीत परिस्थितियों में भी अच्छी पैदावार देने के कारण इसका प्रयोग बहुत से उपयोगी कार्यों में किया जाता है। मोठ की फसल से स्वादिष्ट एवं पोष्टिक तत्वों के साथ–साथ हरा चारा एवं सूखी घास भी प्राप्त होती है। यह मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों को मिलाने के साथ–साथ वातावरण में पायी जाने वाली विषमताओं के प्रति अनुकुलित भी पायी गई है। यही कारण है कि इसके उपयोगों एवं गुणधर्मों को एक साथ शामिल करने की भरपूर कोशिश की जा रही है।

उपयोग :

मोठ एक बहुउपयोगी फसल है। यह रूक्ष और अर्द्ध रूक्ष क्षेत्रों में आर्थिक उपयोग में ली जाने वाली दलहनी फसल के रूप में जानी जाती है। इसका उपयोग सामान्य रूप से दाल के लिए किया जाता है। यह प्रोटीन का एक अच्छा एवं सस्ता स्त्रोत है। इसके निर्दिष्ट, स्थानीय एवं अन्य सामान्य उपयोग कुछ इस प्रकार हैः

1. पापड़ः

पापड़ मोठ के छाने हुए, गीले आटे से बनाए जाते हैं। यह बहुत ही पतले, रोटी के आकार के होते हैं। पापड़ मूंग और उड़द की दालों से भी बनाए जाते हैं। इन्हें तात्कालिक उपयोगों के लिए कई महीनों तक रखा जा सकता है। इन्हें सेक कर या तल कर हल्के भोजन के रूप में खाया जाता है।

2. भुजियाः

इसके लिए मोगर की दाल को बारीक पीसकर उसका गाढ़ा घोल बनाया जाता है। फिर उस घोल में उपयुक्त मात्रा में मसाले आदि मिलाए जाते हैं। घोल को बारीक छेद वाली छलनी से छानकर भुजिया बनाई जाती है। इसका उपयोग सामान्य तौर पर सभी क्षेत्रों में किया जाता है।

3. दालः

अन्य दालों की तरह, मोठ की दाल का उपयोग भी सामान्य है। इस दाल को पहले निश्चित ताप पर उबाला जाता है। बाद में इसमें मसालें आदि मिलाए जाते हैं। इसे नर्म, गर्म और तरल पकवान के रूप में परोसा जाता है। इसे रोटी या चावल के साथ खाया जाता है।

4. मंगोड़ी :

मोगर की गीली दाल को पीसकर, घोल बनाया जाता है। फिर उस घोल में इच्छानुसार अदरक, मसाले, हरा धनिया, प्याज आदि मिलाए जाते हैं। बाद में इस गाढ़े घोल के छोटे–छोटे टुकड़े करके, उन्हें धूप में सुखा लिया जाता है। इन मंगोड़ियों को सब्जी बनाने के लिए, कई वर्षों तक रखा जा सकता है। गर्मियों के मौसम में भी, जब यह फसल नहीं होती है, इनका उपयोग सब्जी के लिए किया जाता है।

5. बड़ा :

इसे बनाने के लिए गीली दाल को पीसकर उसमें मसाले, अदरक और अन्य आवश्यक सामग्री मिलाकर गाढ़ा घोल बनाया जाता है। फिर इस घोल के बड़े बनाकर उन्हें तल लिया जाता है। भारत में बड़ों का उपयोग बहुत समान्य है, क्योंकि यह पेट के रोगों एवं कब्ज आदि को दूर करने में सहायता करता है। यह सूर्य से होने वाले आघातों से रक्षा करता है क्योंकि गर्म क्षेत्रों में सूर्य की विकिरणों से होने वाले आघात अत्यधिक प्रकट होते है।

6. खींच :

खीच को बनाने के लिए, मोठ की दाल और बाजरे के बीजों को उबालकर, गाढ़ा घोल बनाया जाता है। इस स्वादिष्ट पकवान को मक्खन के साथ परोसा जाता है। शुष्क क्षेत्रों के ग्रामीणों के लिये खीच ठंडे पदार्थ के रूप में काम में लिया जाता है तथा साथ ही यह पेट में होने वाले अम्लीकरण को कम करता है।

7. रोटी :

रोटी बाजरे और मोठ के आटे को मिलांकर बनायी जाती है। इसके लिए आटे की लेई को बेलकर तवे पर सेका जाता है।

8. अंकुरित मोठः

मोठ की दाल को पूरी रात पानी में भिगोकर रखा जाता है, जिससे बीज अंकुरित हो जाते हैं। इन अंकुरित बीजों को सीधा उपयोग में लाया जा सकता है या इनमें मसाले आदि मिलाकर सेककर भी खाया जा सकता है। बीजों के कम पौष्टिक एवं वायु–विकार आदि अवगुण अंकुरण के दौरान खत्म हो जाते हैं। यह विधि अस्कोरबिक अम्ल की मात्रा को बढ़ाने के लिए भी प्रचलित है। गाँवों के गरीब लोग अंकुरित बीजों का प्रयोग बहुत समय पहले से करते आ रहे हैं, ये अंकुरित बीज बहुत ही पौष्टिक होते हैं।

9. रबड़ी:

बाजरे और मोठ के आटे को छाछ या लस्सी में मिलाकर गाढ़ा घोल बनाया जाता है, जिसे पूरी रात रखा जाता है। इससे पाचन की शक्ति बढ़ती है। यह पेट की अम्लता को शांत रखता है और गैस को पाचन तंत्र से बाहर निकालने में सहायता करता है। भारत के गर्म और शुष्क मौसम वाले रेगिस्तानी इलाकों में इसे अच्छे शान्ति देने वाले पदार्थ के रूप में काम में लेते हैं। गर्मियों के मौसम में यह बहुत ठंडक पहुँचाती है।

10. इन सभी उपयोगों के अलावा मोठ की फसल भूमि को बाँधने का कार्य भी करती है। इसकी पत्तियाँ घने जाल के रूप में भूमि पर फैलकर इसे पूरी तरह ढ़क लेती है, जिससे हवा द्वारा होने वाला भूमि का कटाव कम होता है। इस प्रकार यह भूमि के तापमान को कम करके उसकी आर्द्रता को भी बनाए रखती है।

गुण :

मोठ का उपयोग बहुत से भोज्य पदार्थों में किया जाता है, जैसे–सब्जी, पापड़, मंगोड़ी, भुजिया आदि। इसके अतिरिक्त मोठ का उपयोग पशुओं के चारे के लिए भी किया जाता है। विभिन्न अध्ययनों से विदित होता है कि मोठ लाइसिन, ल्युसीन जैसे अमीनो अम्लों एवं केरोटीन विटामिन आदि का बहुत अच्छा स्त्रोत है। इसमें पाए जाने वाले कुल प्रोटीन का 6.7 से 7.4 प्रतिशत भाग एल्बुमिन प्रोटीन का होता है। इसमें कई प्रकार के खनिज लवण पाए जाते हैं, परन्तु सल्फरयुक्त अमीनों अम्ल जैसे सिस्टीन एवं मिथ्योनीन बहुत ही कम मात्रा में पाए जाते हैं। बुवाई के समयानुसार मोठ में प्रोटीन की मात्रा बदलती रहती है। जैसे जल्दी बोई गई फसल में प्रोटीन की मात्रा देरी से बोई गई फसल की अपेक्षा अधिक पाई जाती है।

किस्मों में गुणात्मक अन्तर

हाल ही (2000–2001) में किये गये रसायनिक विश्लेषणों से पता चला है, कि अखिल भारतीय समन्वित मरू दलहन परियोजना के अन्तर्गत अध्ययन की गई मोठ की विभिन्न किस्मों में बहुत अन्तर पाया गया है (सारणी–8, 9)।

मोठ की किस्म सी.जेड.एम–45 को इसमें पाये जाने वाले अत्यधिक प्रोटीन (26.13 प्रतिशत) के कारण जाना जाता है, जबकि सी.जेड. एम–12 अधिक मात्रा (55.4 प्रतिशत) में आई.वी.पी.डी. होने के कारण जानी जाती है। इसी प्रकार टेनिन की अधिक मात्रा के लिए आर.एम.बी.–50 महत्वपूर्ण है तथा आर.एम.बी.–24 सिर्फ 13 मिनट में पककर तैयारी हो जाती है। अतः जल्दी पकने की योग्यता के कारण यह प्रजाति जन–सामान्य के बीच लोकप्रिय है।

सारणी–9 को देखकर पता चलता है कि नई विकसित किस्मों में आर.एम.ओ.–435 अपनी अत्यधिक प्रोटीन (27.50 प्रतिशत) की मात्रा के कारण महत्वपूर्ण है। साथ ही जल्दी पकने वाली किस्मों में आर.एम.ओ.–435 किस्म अच्छे पाचक प्रोटीन के होने से महत्वपूर्ण बनी है। जल्दी पकने वाली किस्मों में काजरी मोठ–1 है, जबकि ज्वाला और आर.एम.ओ.–435 किस्में पकने में अधिक समय लेती है। अवांछनीय पदार्थ के रूप में पाये जाने वाले टेनिन की मात्रा आर.एम.ओ.–225 तथा आर.एम.ओ.–40 (334 मि.ग्रा./ग्राम) सामान्यतः पीत शिरा मोजेक वाइरस रोग के प्रति प्रतिरोधक भी पायी गई है। साथ ही यह कई गुणधर्मों में भी अन्य किस्मों की तुलना में उत्तम पायी गई है।

सारणी–8 : मोठ की कुछ किस्मों के गुणधर्मों की अधिकतम एवं न्यूनतम मात्रा

गुण धर्म	न्यूनतम		अधिकतम	
	किस्म	मात्रा	किस्म	मात्रा
कच्चा प्रोटीन (प्रतिशत)	सी.जेड़.एम.–18	23.0	सी.जेड़.एम.–45	26.13
आई.वी.पी.डी. (प्रतिशत)	आर.एम.बी.–50	44.1	सी.जेड़.एम.–12	55.4
टेनिन (मिग्रा/ग्राम)	जी.एम.ओ.–9915	0.09	आर.एम.ओ.–225	0.77
कार्बोहाइड्रट (प्रतिशत)	सी.जेड़.एम.–12	49.1	सी.जेड़.एम.–18	57.5
आर्द्रता (प्रतिशत)	आर.एम.ओ.–225	6.2	आर.एम.बी.–24 आर.एम.बी.–11	7.0
पकने में लगने वाला समय (मिनट)	आर.एम.बी.–24	13.0	आर.एम.एम.–101	17.0

स्त्रोत : वार्षिक रिपोर्ट, अखिल भारतीय समन्वित मरू दलहन परियोजना, 2002

सारणी–9: मोठ की कुछ उन्नत किस्मों के गुणधर्म।

गुण धर्म	आर.एम. ओ.–25	काजरी–मोठ–1	आर.एम.ओ. –435	आर.एम. ओ.–40	आर.एम. ओ.–257	ज्वाला
कच्चा प्रोटीन (प्रतिशत)	24.5	25.0	27.5	24.5	18.77	19.8
आई.वी.पी.डी. (प्रतिशत)	47.5	54.0	22.5	20.0	26.0	22.0
दाना पकने में लगने वाला समय (मिनट)	15.5	15.0	22.5	20.0	26.0	22.0
टेनिन की मात्रा (मिग्रा/ग्राम)	0.33	0.39	0.37	0.33	0.38	0.38

अपौष्टिक कारक तथा उनका निवारण :

मोठ में कुछ अपौष्टिक कारक भी पाए जाते हैं, जिनमें से ट्रीप्सीन अवरोधक, सेपोनीन तथा फाइटिक अम्ल अधिक हैं। सामान्य रूप से अंकुरित बीजों एवं पकी हुई दाल में से ये अवयव नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार बीजों को अंकुरित करके या फिर दबाव में पकाकर ट्रीप्सीन अवरोधकों की सक्रियता को 98 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। इसी प्रकार सेपोनीन की मात्रा भी 77 प्रतिशत तक कम की जा सकती है। बीजों को पकाने से इसमें उपलब्ध प्रोटीन की पाचन क्षमता में भी 20 से 50 प्रतिशत तक वृद्धि हो जाती है।

वर्ष 2002 में कम वर्षा की स्थिति में मोठ जड़ में वृद्धि
काजरी मोठ – 2